धोती शतक

डॉ. उम्मेद सिंह बैद ' साधक '

Published By
Dhriti Research Foundation
Loknath Abasan, 8A Kolupukur Road
Teghoria, kolkata - 700157

Dhoti Satak
Written by Dr. Ummedsingh Baid

ISBN

Published by : Dhriti Research Foundation
Loknath Abasan,8A Kolupukur Road
Teghoria, Kolkata - 700157

1st Edition
All rights reserved to Dhriti Research Foundation

Printed By :

Price :

धोती शतक

डॉ. उम्मेद सिंह बैद ' साधक '

प्रकाशक : **धृति रिसर्च फ़ाऊंडेशन**
लोकनाथ आवासन, ८ए कोलुपुकुर रोड,
तेघरिया, कोलकाता – ७००१५७

मुद्रक :

मूल्य :

सम्पादकीय

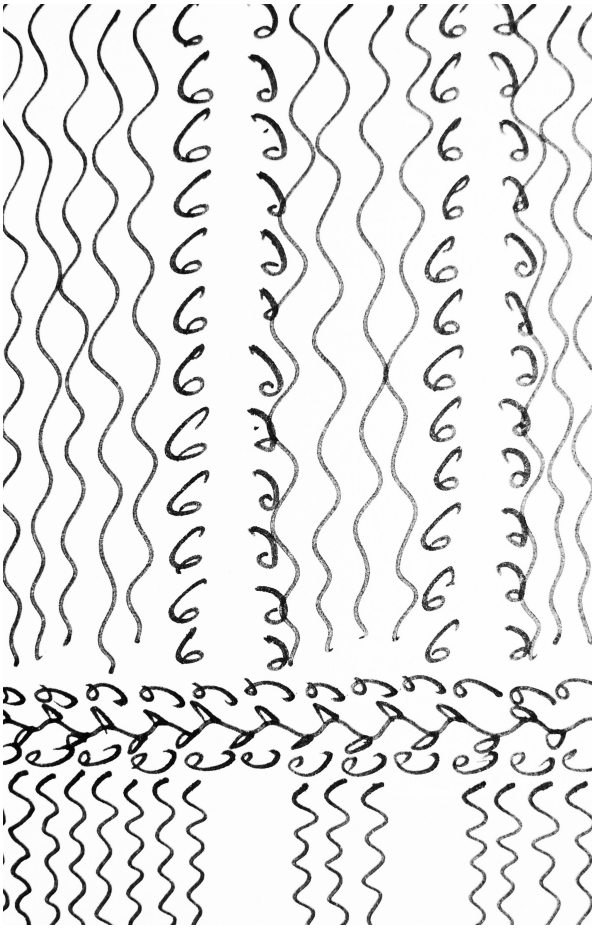

अनुक्रमणिका

1. **बदल सकता है स्वभाव .....**

2. सफाई अन्तरमन की .....

3. **साधन है देह .....**

4. **सदुपयोगी देह .....**

5. **जीजिविषा .....**

6. **पांच व्रत .....**

7. **कस्तूरी-मृग .....**

8. **व्यक्ति सच ,संस्थान मिथ्या .....**

9. **संगठन-चर्चा .....**

10. **भिक्षु कहां हैं? .....**

11. **बदलो वस्त्र!** .....

बदल सकता है स्वभाव

बाबूजी के साथ आर्थिक मोर्चे पर असहमतियां इस साधक के मन-तन को तोड़ गई। अर्थोपार्जन के लिये नित्य प्रातः योगासन सिखाने और दो मित्रों की योग-चिकित्सा हेतु साईकिल पर जाता; इस क्रम में खाली पेट 22 किलोमीटर साईकिल-चालन के कारण आंतड़ियां-लीवर खराब हुये। मानसिक द्वन्द को देखकर पत्नी-रमेश सहित कुछ परिजनों ने 'पागलपन' माना और मनोचिकित्सक ने नींद की दवायें सुझा दीं। जल्दी ही बात समझ में आ गई कि कोलकाता और एलोपैथी न चैन से जीने देंगे, न मरने देंगे। इन हालातों में अब न घर के काम का रहा न समाज के। शरीर छोड़ने का विचार भी बना। अन्त में सहधर्मिणि को मनाकर शरीर को राजस्थान ले आया। चन्द वस्त्रों के साथ मेरी यह बदरंग हुई धोती भी थी। काफ़ी साथ दिया इस धोती ने, आज कृतज्ञता सहित इसे स्मरणांजलि समर्पित है।

17-9-1997, सरदारशहर

छोड़ हाथ का काम बीच में तुमको लिखता।
यूं समझो मैं जैसे तुमसे बात ही करता।।
सोमवार से पत्र किसी को ना लिखा है।
गीता-लेखन छोड़, ये पहला पत्र लिखा है।।1।

याद करो धोती मेरी, जो रंग गई थी।
कुछ कपड़ों के संग धुली, बदरंग हुई थी।।
ऐसा रंग चढा कि बाहर पहन ना सकता।
इस धोती को लूंगी सा भीतर ही पहनता।।2।

सोचा था मेरे स्वभाव के जैसा रंग है।
ना छूटे इस जनम में ऐसा पक्का रंग है।।
यही जान के मैंने तो प्रयत्न भी छोड़ा।
फट जायेगी यूंही करके इसको छोड़ा।।3।

इस धोती की जैसा मैं भी रंग गया हूं।
निज स्वभाव के घेरे में ही बन्द हुआ हूं।।
अच्छा भले न समझूं, पर अब क्या बदलूंगा।
यही सोच के चुप हूं, अब कुछ ना बदलेगा।।4।

इस दुर्बल शरीर को लेकर मैं आया हूं।
कुछ शक्ति-संचय करने को मैं आया हूं॥
राजस्थान की जलवायु में यह सुधरेगा।
पर धोती और स्वभाव का रंग ना बदलेगा॥5।

पूत जाये दक्खिन, पर लक्खन वही रहेंगे।
मानव चाहे कहीं जाये मन ना बदलेंगे॥
ऐसा ही मै जोर लगाकर बकता रहता।
लेकिन इसको धोने की चिन्ता ना करता॥6।

परेशान था मैं और सारे मित्र-बन्धु भी।
क्या करते इस दुष्ट-भाव का मित्र बन्धु भी॥
रंग देख इस कपड़े का, सबका मन बुझता।
मगर काम का है, छोड़ते भी न बनता॥ 7

आज अभी धोती को देख के दंग हुआ मैं।
इस सफेद झक रंग को देख के दंग हुआ मैं॥
कुछ भी नहीं किया था इसका रंग मिटाने।
बस धोकर के तेज धूप में डाला मैंने॥ 8।

सूरज की प्रचण्ड गर्मी वो काम कर गई।
इस धोती का वह पीलापन साफ़ कर गई॥
अब कुर्ते से भी कुछ ज्यादा चमक रही है।
शान से पहनी है मैंने तो गमक रही है॥ 9

सफाई अन्तरमन की

धोती के साथ स्वयं को देखने का भाव दैनिक ध्यान-अभ्यास का फल है। नित्य प्रातः घर में झाड़ू-साफी करते या वस्त्र-प्रक्षालन करते अन्तरमन को स्वच्छ-निर्मल करने-होने की चाहत बनी रहती है। अवश्य यह कामना हर साधक-मानव की रहती-चलती है। कामना पूरी होने की राह अब तक बननी बाकी है। सूरदास का एक पद स्मरण आता है – 'मेरो मन अनत कहां सुख पावै? जैसे उड़ि जहाज को पंछी पुनि जहाज पे आवै। मेरो मन अनत कहां सुख पावै?' दिख गया सूरदास को,- मन जब तक नत नहीं हुआ, तब तक सुख कैसा? धोती स्वच्छ हुई, क्योंकि उसका तो कोई मन नहीं है … …

17-9-1997, सरदारशहर

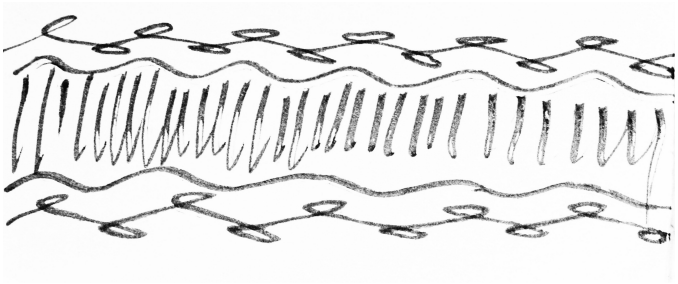

माना हुई पुरानी-थोड़ी फटी भी धोती।
लेकिन फिर भी सुख देती यह प्यारी धोती॥
अपनी बात कह रहा मैं तुम समझ रही हो।
फटी-पुरानी बिम्ब की बातें समझ रही हो॥10

प्रजापतिजी की बातें सुन यूं लगता है।
मुझे बदलना होगा खुद कोयूं लगता है॥
शुभ्र था मैं भी इस धोती की तरह सुहाना।
जाने कैसा रंग चढा यह बिगड़ा बाना॥11।

परिस्थिति का रंग चढा है मेरे ऊपर।
धुल सकता यदि ताप पड़े कुछ मेरे ऊपर॥
प्रखर तपस्या की अग्नि में जलना होगा।
अन्तर के भावों को मुझे बदलना होगा॥12।

जो अपने हैं उन्हें बना डाला है दुश्मन।
परिजन दुखी रहें तो कैसे शान्त रहे मन?
एक किनारे बाबूजी हैं, एक पे शिल्पा।
इन दोनों से ही बनता है मेरा आपा॥13।

मन में न्यून भाव इनके प्रति आया जबसे।
बदल गया व्यक्तित्व मेरा पूरा ही तब से॥
गुस्सा खीझ और चिन्ता मेरा स्वभाव बना है।
मुक्त हास्य निश्चिन्त चित्त अबतो सपना है14

गहरी नींद अंधेरी रात में स्वप्न देखता।
कब होगा सूर्योदय लेटा राह देखता।।
भोर हो गई लगता है अब आंखें खोलूं।
गहरे चिन्तन पूर्वक निज स्वभाव को बदलूं।।15

मन में लेकर क्षमाभाव तुमसे कहता हूं।
बीत गई सो बात गई निश्चय करता हूं।।
है मेरा सौभाग्य सभी कुछ पाया मैंने।
प्रभु की कृपा से होता है सब, समझा मैंने।।16

जड़ धोती भी साफ हुई मैं तो चेतन हूं।
ना हारा संघर्ष में वो बलशाली मन हूं।।
परिस्थिति का क्या रोना वे स्वनिर्मित हैं।
बदल जायेंगी संग मेरे स्व से परिमित हैं।।17

निज को बदलूं तो सृष्टि भी बदल जायेगी।
मेरी अकड़ भरी दृष्टि भी बदल जायेगी।।
अकड़ के कारण ही व्यक्तित्व हुआ बदरंगा।
अकड़ छूट जाये तो बन्दा अब भी सुरंगा।।18

साधन है देह

धोती और देह की समानता गत दो दशकों से बार-बार देख-जान रहा है साधक! अपने आस-पास उपयोगी साधनों का निर्मम दुरुपयोग देखकर मन व्यथित होता है। इस व्यथित मन की अभिव्यक्ति को कोई पसन्द नहीं करता। पानी-बिजली का अपव्यय हो या आवश्यकता से अधिक सामान की खरीदारी; अनावश्यक कार को सड़क पर उतारकर सड़क पर भीड़ बढाना हो या शादी-आयोजना पर होता दिखावा; साधक की व्यथा शब्दों में आ जाती है और सबके मान भंग होते हैं। सही देखने की कोशिश में परिजनों के हाथों होते दुरुपयोग की जिम्मेदारी स्वयं की तरफ ही आती है। जीवन को सही जाना-समझा नहीं, तो समझाता क्या? जीवन विद्या की रोशनी में स्वयं को जानने-समझने का अभ्यास जारी है। शरीर-साधन का सदुपयोग जारी है। … …

17-9-1997, सरदारशहर

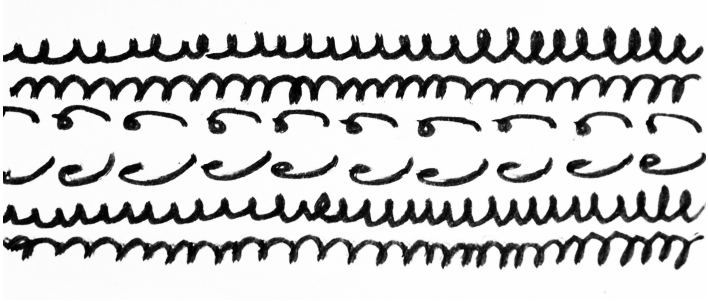

ऐसा है कि बाहर तो कुछ ना बदलेगा।
ओह! सभी कुछ अच्छा है तो क्यों बदलेगा!
अगर बदल भी जाये तो कुछ फ़र्क नहीं है।
अन्दर हैं सुख सारे, बाहर स्वर्ग नहीं है॥ 19।

तुम साक्षी हो मेरी इस अन्तरयात्रा की।
गिरते-उठते भावों की, मन की वार्ता की॥
धोती का मैला होना देखा-भोगा है।
इसे फेंकने से तुमने हरदम रोका है॥20

आओ तुम भी देखो इसकी चमक-दमक को।
जीर्ण-शीर्ण हालत में भी अन्तर की गमक को॥
धोकर रखूंगा फिर मैला नहीं करूंगा।
पर्यावरण से मन को मैला नहीं करूंगा॥21।

यह ना समझना यह धोती बस मेरी ही है।
जो भी इसे पहनना चाहे, बस उसकी है॥
मुझ पर है दायित्व संभाले रखता हूं मैं।
यह व्यक्तित्व समष्टि का है, रखता हूं मैं॥22।

इस चर्चा को समझ व्यक्तिगत ना बिसराना।
सबकी है यह सबके आगे तुम दोहराना॥
शिल्पा,बाबूजी रमेश और मुरलीजी को।
संगठना की पूंजी है, दे दो श्यामजी को॥23।

सुनो काम की बात है यह कह दो समाज को।
सर्व-मंगल की आशा में दे दो समाज को॥
मोह करो ना फटी हुई धोती को लेकर।
दुगुना वापस मिल जाता, देखो तो देकर॥24।

धोती जैसे ही कपड़ा जानो शरीर को।
साधन ही जागृति-क्रम का मानो शरीर को॥
रंग चढे तो साफ भी हो जाता है इक दिन।
साफ-सफाई जारी रखना अच्छा प्रतिदिन॥25।

धोती हो या अन्य कोई वस्तु, साधन है।
जागृति-क्रम में सहयोगी सारे साधन हैं॥
है उपकार साधनों का, तो सदुपयोग हो।
नर तन भी तो साधन, क्योंकर दुरुपयोग हो?26

हुआ पुरातन वस्त्र, देह भी जीर्ण हो रही।
दुर्बल-रुग्ण और बदरंगी, साफ दिख रही॥
पूरा फटने तक इसको ना नष्ट करुंगा।
सहज चेष्टा पूर्वक निर्मल-स्वच्छ करुंगा॥27।

सदुपयोगी देह

यात्रा के साधन प्रयोजनानुसार बदलते हैं; जैसे साईकिल, बस, कार, रेलगाड़ी, हवाई जहाज या पैदल; गन्तव्य तक यात्रा जारी रहती है। हर नये साधन को प्रयोजनानुसार सदुपयोग कर लेना सही साधना है। साधनरुप धोती जीर्ण-शीर्ण हुई, तो उसे फ़ेंकने की बजाय दो चादरें बना लीं। सामायिक में चादर का उपयोग है, वायुकाय के जीवों की रक्षार्थ देह और सिर पर ओढी जाती है। लीवर सहित समूचा पाचन-तन्त्र खराब होने से देह भी अब रुग्ण-लाचार हुई, सो चादर की तरह इसके लिये भी सामायिक यथेष्ट है।

सरदारशहर 02-11-1997,

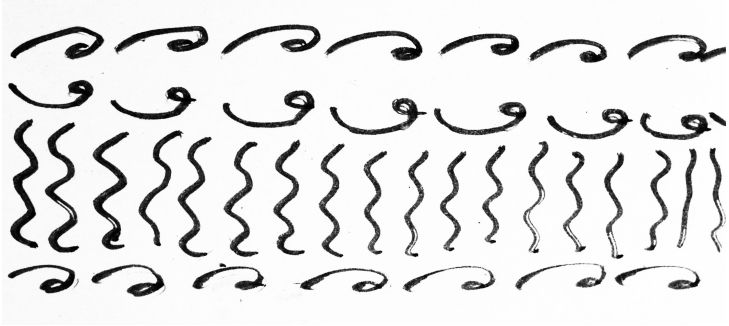

आज पुनः यह धोती शीष उठाना चाहे।
अपनेमन की बात तुम्हें बतलाना चाहे।।
डेढ महीना पहले तुमसे बात कही थी।
क्यों तुमने इस धोतीकी सुधि भी ना ली थी।28

जीर्ण-शीर्ण थी फ़िर भी खूब संभाला मैंने।
बार-बार धोकर के इसको पहना मैंने।।
तीन महीना पहले कोलकाता छोड़ा है।
अपने घर के परिवेश में रख छोड़ा है।।29

सुनलो अब यह धोती तो फटना चाहती है।
एक थी अब तक, अब यह दो होना चाहती है।।
पावों से चलते-चलते थक गई बिचारी।
चादर होकर तन ढकने की है लाचारी।।30

मुरलीजी भी चुप बैठे हैं नहीं बोलते।
कहां श्यामजी बैठे हैं, मुंह नहीं खोलते।।
रमेश भी चिन्तन करता यह आवश्यक था।
धोती की चर्चा के पीछे मैं स्वयं था।।31।

इतने लम्बे समय में परिवर्तन आता है।
पहले चाल तेज थी अब बैठा बन्दा है।।
गति में भी एक लय थी बैठक में भी सुख है।
तुमको सब बतलाना मेरे मन का सुख है।।32।

सामायिक मैं नित्य किया करता हूं सुनना।
मुनि धर्मेश के पास नित्य आसन है गुनना।।
आज मौन में पता चला वे मित्र हैं मेरे।
उनकी डायरी में देखे, निज चित्र घनेरे।।33।

अपने गृहस्थीपन में मुझसे खूब मिले थे।
भुला गया मैं किन्तु वे मुझे ना भूले थे।।
उनके संग नित्य संस्कृति चर्चा होती है।
है संयोग यही धोती पहने होती है।।34।

बदल गई है धोती रंग पुराना छूटा।
समझो आज से ही मेरा यह बाना छूटा।।
आज शाम ही इसे फ़ाड़कर दो कर दूंगा।
धोती के बदले कल से चादर पहनूंगा।।35।

धोती के संग मैंने बैठना सीख लिया है।
अपनी भटकन की आदत को बदल दिया है।
संस्कृति का सुर तो बिल्कुल वैसा ही है।
धोती के ताने-बाने के जैसा ही है। 36।

जीजिविषा

शरीर अस्वस्थ रहते शान्ति-स्थिरता पूर्वक लिखता रहा। सरदारशहर की औषध और बीकानेर की श्रुषुषा से तीन माह में शरीर संभलने लगा। नियमित मौन-सामायिक आदि का भी लाभ मिला। बहुत लिखा इस काल में, किन्तु काम है कि आगे से आगे बढता ही चला जाता है। बीस साल बाद, आज भी लिखता तो हूं, किन्तु अब मन की छटपट शेष हुई। अब मैं करता नहीं, हो जाता है काम। हो जाता है कुछ ज्यादा ही; पहले की तुलना में काफ़ी ज्यादा और काफ़ी आनन्ददायक भी। यही है गीता का निष्काम कर्म। यही कर्म है जिसे करने से कर्म-बन्धन नहीं होता।

सरदारशहर 2-11-1997,

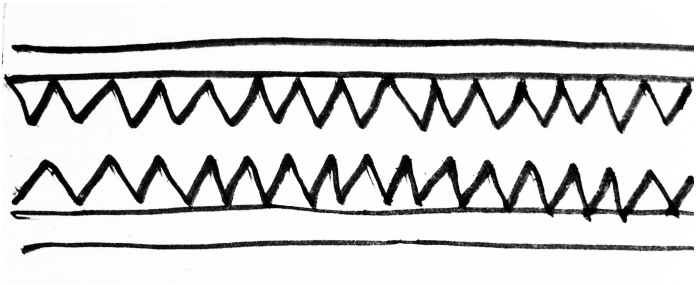

पहले ये ही काम पैर से चलकर करता।
इसे चित्त पर धारा है अब ध्यान से करता॥
वैदिक पहियों से भारत को मापा पहले।
श्रमण-परम्परा की चादर था भारत पहले॥37।

पूछा था मैंने सबको प्रामाणिकता से।
धोती का क्या करना, कोई न बोला मुझको॥
सबकी अपनी-अपनी अलग विवशता होगी।
लेकिन इस धोती की भी तो अवस्था होगी॥38।

जिसको कोई मार्ग नहीं बतलाता जग में।
स्वयं खोजता मार्ग, यही प्रचलित है जग में॥
इस धोती ने स्वयं राह पा ली है अपनी।
चादर बनकर जगह हृदय पर धरी है अपनी॥39

अब धोती की तरह नहीं भटकूंगा मैं भी।
बैठ चित्त के पास ध्यान कर लूंगा मैं भी॥
है संयोग विचित्र यहां भी कोई न बोला।
चंचल मुझे जान के किसी ने मुंह ना खोला॥40।

चदर बनते ही चंचलता शेष हो गई।
मेरे मन के सब प्रश्नों का उत्तर बन गई॥
हिन्दू राष्ट्र की नई धारणा मुझे मिली है।
है अपूर्व चादर जैसी ना बन्द-सिली है॥41।

सुनलो सोनी नहीं पता आगे क्या होगा।
चादर है यह फ़टी हुई इसका क्या होगा॥
हो सकता है मुझे कोई स्वीकार करे ना।
योगक्षेम की कोई राह भी मुझे मिले ना॥42।

लेकिन अपनी चिन्तायें सब छोड़ रहा हूं।
सामायिक की यह चादर मैं ओढ रहा हूं॥
देखूं तो समता पर कितना आ पाता हूं।
अहंकार अपना कैसे मैं भुला पाता हूं॥43।

पिछला पत्र लिखा था तब तो बहुत समय था।
आज मगर मैं प्रातः से ही बहुत व्यस्त था॥
था साप्ताहिक मौन, बहुत लिखना था मुझको।
कलम रोक के यह संवाद लिखा है तुमको॥ 44।

अब तक तो यह वस्त्र मेरे पावों में ही था।
बिल्कुल वैसे जैसे मैं कलकता में था॥
तीन महीने बीत रहे, मैं स्वस्थ हो रहा।
कैसे बीते बाकी जीवन प्रश्न कर रहा॥45।

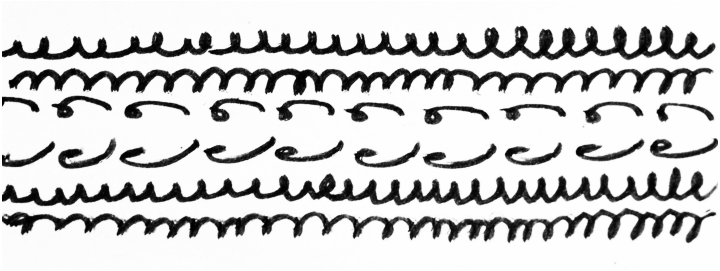

पांच व्रत

कर्मों की सूक्ष्म गणना जैनदर्शन का वैशिष्ठ्य है। पावों में वैदिक दर्शन की गति और चित्त पर जैन-सामायिक का योग इस साधक की साधना है। दैत में अद्वैत दर्शन! धोती-शतक उसी काल में उतरी रचना है, जो मेरी सह-धर्मिणि के संचित पत्रों में सुरक्षित रह गई। अब इसे थोड़ा संशोधित-संवर्धित करके सम्पादन पूर्वक पोस्ट कर रहा हूं। पुस्तक में इससे जुड़े अनेक सन्दर्भ-संस्मरण आने हैं।

सरदारशहर

देखो मेरा मीत बना यह वस्त्र सुहाना।
राह दिखाता है मुझको बन करके बाना।
पावों से सीने तक तो यह आया देखो।
कौन धरे इसको मस्तक पर आगे देखो॥46।

जाने किसे कठोर धूप से त्राण दिलाये।
किसके घाव की पट्टी बन मस्तक सहलाये॥
अथवा फिर वैसे ही घिसकर फट जायेगा।
है विश्वास कोई इससे ना कष्ट पायेगा॥47।

यह चादर अब फिर कलकत्ता ना आयेगी।
यही मनाओ मुझको फिर ना भटकायेगी॥
जो होना है यहीं पे होगा संकल्पित हूं।
कुछ भी ना होगा, तब भी ना भय-कम्पित हूं॥

संस्कृति चले निरन्तर मैं हूं निमित्त केवल।
ना फल पर अधिकार, कर्म निष्काम है केवल॥
कर्म निरन्तर करना है, चादर का स्वर है।
चरैवेति तो शाश्वत भारत का ही स्वर है॥49।

वैदिक-श्रमण संस्कृति दोनों एक राह पर।
एक ही धोती काम आ रही अपने दम पर॥
अपनी जिम्मेदारी पर ही चलता भारत।
पूरी धरती बचा सकेगा अपना भारत॥50।

धोती से चादर, चादर से रुमाल बनता।
कोमल-नरम सुहाना इसका स्पर्श लगता।
बनने से फटने तक, सबको सुख देती है।
धोना-पहनना-ओढना-बांधना सब करती है॥51।

यात्रा में धोती ओढन-बिछावन-गमच्छा।
धूप और बारिश में बन सकती है छाता।
दुर्घटना में रक्त बहे तो बांधो इसको।
हाथ से धोकर स्वच्छ सदा ही रखना इसको॥52

अन्तिम ये पंक्तियां सभी को बतला देना।
कोई चिन्ता नहीं करे, यह समझा देना॥
मैं विस्तार श्याम का हूं तो वही करूँगा।
पांचजन्य बन करके संस्कृति को स्वर दूंगा॥53।

पांच व्रतों की है पहचान इसी चादर में।
मैं भी ढूंढूगा खुद को इस ही चादर में॥
बात हुई ना शेष और लिखना है काफ़ी।
हो सकता है अगली बार लिखूंगा बाकी॥54।

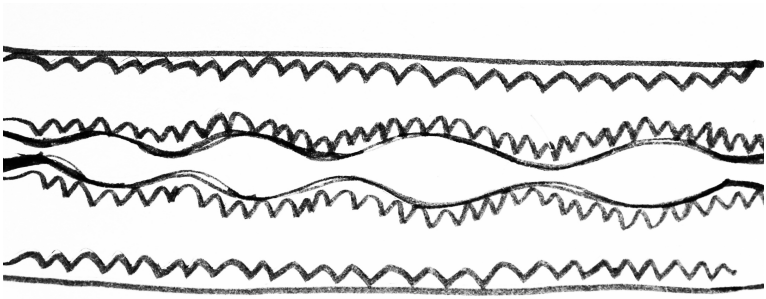

कस्तूरी-मृग

प्रस्तावना – वाशिंग-मशीन में रंगीन कपड़ों के साथ मेरी सफ़ेद-झक्क धोती पर रंग चढ गया। गहरे पीले-लाल धब्बों ने धोती को पहनने लायक नहीं छोड़ा। नरम धोती फ़ेंकी न जा सकी, बोझ बन कर रह गई। इधर गंभीर बीमारी से ग्रस्त मेरा शरीर भी बोझिल हुआ, तो चिकित्सार्थ उसे राजस्थान की जलवायु में धोती के साथ ही ले आया। बीकानेर, सरदारशहर होते हुये धोती और शरीर लाडनूं पहुँचे। जैनविश्वभारती परिसर में ध्यान-सामायिक-तप-सत्संग-चर्चा में यह शरीर और धोती स्वस्थ-निर्मल हुये। कड़ी धूप में धोती के रंगीन दाग-धब्बे उड़ गये, मगर उसके कोमल धागे-रेशे इस ताप-तप को सहन न कर सके और धोती फटने को आ गई। अपनी दादीजी से प्राप्त संस्कारों से बंधा होने से मैंने इसे फ़ेंका नहीं, दो-फ़ाड़ करके चादर बना ली। ध्यान-

13-10-14, कोलकाता।

साधना में कोमल-नर्म चादर बदन पर आ गई; अर्थात पावों से उठकर हृदय और मस्तक पर आ गई। और फ़ट कर रुमाल के रुप में इसने चेहरे को सहलाया।

धोती की तरह ही रुग्ण देह को सार्थकता देने की सांस्कृतिक प्रेरणा से मैं जैनविश्वभारती की ध्यान-अध्ययन गतिविधियों में संलग्न हुआ। 'धोती शतक' उसी काल में सहज रचित कविताओं और पत्नी-बेटी के नाम लिखे पत्रों में सुरक्षित रही, कई बार सुनी-सराही गई; आज दो दशक बाद व्यक्ति-वस्तु-संस्थान-समाज से जुड़े अनेक जटिल समीकरणों का खुलासा करती हैं। कविताओं के रचना-परिवेश से जुड़े संस्मरण अभी लिखे हैं।

3-11-1997, सरदारशहर

यह सारा विवरण सही को जानने-समझने की यात्रा है अतः अन्तिम सत्य नहीं है। जैन विश्वभारती में बिताये कीमती समय में धोती-चादर निमित्त बन गई; कुछ भी बन सकता है निमित्त; जागृति-क्रम में सहयोगी सभी निमित्तों के प्रति कृतज्ञता सहज स्वाभाविक है। चादर, जैनविश्वभारती परिसर, तुलसी अध्यात्म नीड़म के ध्यान-कक्ष में सुदीर्घ आवास, वर्द्धमान ग्रन्थागार, श्वेतवस्त्र और मुखपट्टी बांधे चेहरे, मित्र-परिजन, पास या दूर – सभी निमित्त! गत 17-18 वर्षों में निमित्त फ़िर बदले हैं, यात्रा जारी है। निमित्तों का बदलना इस साधक की चंचलता माना गया, जबकि इसका मूल 'चरैवेति' भी हो सकता है। इस प्रक्रिया में छूटता कुछ नहीं, संस्कार रुप में सारतत्व साथ ही रहता है; भूसा-कचरा छंट जाता है। संगठनों-सम्प्रदायों की विवशता है कि अपने अनुयायियों को छिटकने ना दें, इसलिए बाड़ाबन्दी होती है। साधक बाड़े तोड़कर निकल आया करते हैं।

चादर ओढ के पहली सामायिक करली है।
हृदय से यह चादर मैंने स्वीकार ही ली है।।
यह संयोग सुहाना आज मैं उपवासी हूं।
विश्लेषण कर सकता मन से विश्वासी हूं।।55।

इस चादर की तरह साफ-निर्मल बैठा हूं।
काम शुरु करने से पूर्व तुम्हें लिखता हूं।।
चादर का संदेश बड़ा धीमा है सुनना।
शान्त भाव से बैठ ध्यान में पूरा गुनना।।56।

धोती प्रवृमूलक थी वैदिक धारा थी।
जीवनभर चलते रहने की वह धारा थी।
बहिर्मुखी चंचलतामूलक वह प्रवाह था।
इसके तीव्र प्रवाह को तुमने भी देखा था।।57

सब प्रवृतियां बाहर की वैदिक होती हैं।
तीन एषणाओं पर आधारित होती हैं।।
वित्त-पुत्त और यशोकामना कर्म-प्रेरणा।
सांस्कृतिक धारा देती है विजय प्रेरणा।।58

शाखा-संस्कारों से पूरित मन है मेरा।
तीन एषणाओं से ऊपर जीवन मेरा।।
अभ्युदय भारत का इस धारा से होगा।
शायद सारा विश्व शीघ्र धोतीमय होगा।59

हमको निःश्रेयस की भी चिन्ता करना है।
निवृत्तिमूलक धारा की रक्षा करना है॥
श्रमण परम्परा निवृति पर ही आधारित है।
देह छोड़कर आत्मभाव पर आधारित है॥60।

समझो तो सुर है इसका चादर के जैसा।
झीना-कोमल और स्वच्छ चादर के जैसा॥
महावीर का धर्म न जाने क्यों बिसरा है।
क्यों यह केवल चादरधारी तक सिमटा है॥ 61।

आत्मभाव से निकले समाज की धारायें।
अर्थ-स्वास्थ्य और राजनीतिमूलक धारायें॥
सारे सामाजिक बन्धन आत्मा के हित में।
हों सारे व्यापार सिर्फ़ आत्मा के हित में॥62।

बाहर के परिवर्तन सारे भीतर से हों।
संस्कार परिवर्तन सारे तलस्पर्शी हों॥
ध्यान से होगा केवल तब ही मौलिक होगा।
चादर को अपनाओ तो यह सब कुछ होगा॥63

व्यक्ति सच ,संस्थान मिथ्या

जैन साधु सत्य-महाव्रती होता है, मिथ्या भाषण और मिथ्या आचरण से संकल्पशः विरत! मुनि धर्मेश से मित्रता है, तो अत्यन्त संवेदित हृदय से मेरी शारीरिक-मानसिक अवस्था पर शब्दों-आश्वासनों के मरहम लगाते हैं। मुनिश्री
दुलहराजजी, किशनलालजी, महेन्द्रकुमारजी आदि सभी वरिष्ठ महाव्रती वर्षों से कृपाशील हैं; संभवतः अपनी मर्यादा में संस्था-पदाधिकारियों से चर्चा भी करते हों। लगातार चार वर्षों तक चली रस्साकसी से भी कुछ न हुआ; संस्थान सिर्फ़ लेना जानते हैं, देना नहीं। इस बात के और स्पष्ट प्रमाण आगे बहुतायत से मिलते चले गये, मिलते जा रहे हैं।

नवम्बर' 1997, लाडनूं

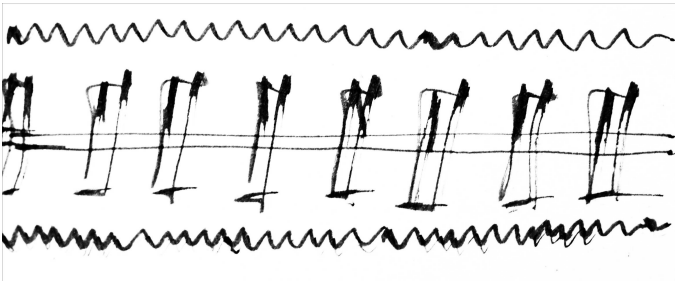

चूका मेरा ध्यान, हो गई दुर्घटनायें।
खुद को बिसराकर ले आया समस्यायें।
रहा दौड़ता अब तक कस्तूरी-मृग नाई।
सामायिक की चादर , देर से ही अपनाई॥64

मुनि धर्मेश से सत्संग का परिणाम हुआ है।
मेरे अन्तरमन से ही यह स्वर उभरा है॥
तेरापंथ संघ की भी अपनी रचना है।
देशव्यापी समितियों का ताना-बाना है॥65।

साधन-प्रतिभा दोनों का शुभ मेल यहां पर।
तब भी क्यों परिणाम मिला ना मुझे यहां पर?
हो सकता है गणनाओं में चूक है कोई।
कौन करे संवाद, यहां तैयार ना कोई॥66।

ध्यानभूमि से निकला है नैतृत्व निराला।
आज के दिन यह है सर्वोत्तम साधन वाला॥
है मेरा सौभाग्य, निमित मैं भी बन जाऊँ।
इसी भाव से भरकर के चादर अपनाऊँ॥ 67।

धोती थी तब तक तो मन में आशंका थी।
अपनी तेज गति के कारण चंचलता थी॥
योगक्षेम का प्रश्न दानवाकार खड़ा था।
परिवार के दायित्वों का बोझ बड़ा था॥68

रुग्ण हुआ तन, स्वास्थ्य लाभ करने आया हूं।
दो कौड़ी भी पास नहीं, मैं चकराया हूं॥
प्रतिभा-श्रम की तारीफ़ें सूखी मिलती हैं।
बाहर-भीतर द्वन्दों की चकरी चलती है॥69।

नहीं पलायन को स्वीकार किया है अब तक।
इसीलिये ना छोड़ा मैंने वस्त्र अभी तक॥
चादर पहन के बैठा, मन आश्वस्त हुआ है।
हो जायेगा योगक्षेम विश्वास हुआ है॥70।

महाव्रती आश्वासन देते सांझ-सवेरे।
हो जायेगी अर्थ-व्यवस्था खातिर मेरे॥
उधार का भोजन लेना पड़ता है मुझको।
औषधि का है पथ्य दूध, ना मिलता मुझको॥71।

शिविर सामने आता है मेरी ही खातिर।
साथ रहूंगा मैं सबके, इसकी ही खातिर॥
इतने में ही स्वीकृत हो जायेगी चादर।
बहुत धवल बेदाग रखी है मैंने चादर॥72।

संगठन-चर्चा

सन्दर्भ – 'साधक के पत्र' एवं 'उद्भव,उत्कर्ष और अन्त; एक आध्यात्मिक क्रान्ति की आद्योपान्त समीक्षा। तेरापन्थ के युवाचार्य महाश्रमण ने बहुत ध्यानपूर्वक देखी-सुनी-समझी थी संगठन-कार्यकर्ता-निर्माण योजना। बहुत संक्षिप्त में; ८ पन्नों में ही; प्रस्तावना से लगाकर कार्यारम्भ तक सारी योजना लिखकर ले गया था यह साधक! तीन दिन उस पर सुचिन्तित भाव से चर्चा चली, हर पहलू को पूरा खोलकर समझा गया। कार्यकर्ता निर्माण-योजना में स्वयं को झोंक देने का संकल्प रहा साधक का! गुरुदेव महाप्रज्ञ ने बात नहीं की इस विषय पर। संभव है कि –

उनको साधक स्थिर-मति न लगा हो।

संघ-प्रचारक रहने के कारण उनको मेरे जैनत्व पर हिन्दुत्व भारी लगा हो।

उस समय का रुग्ण शरीर और मृत्यु की भविष्य-वाणियों का प्रभाव हो।

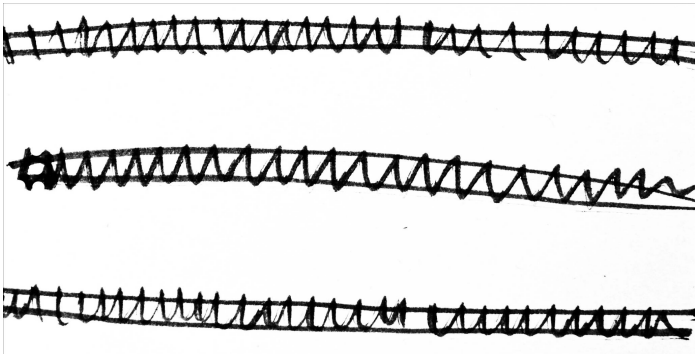

इकलौते बेटे को पिताश्री भोमराजजी कैसे और कबतक छोड़ेंगे, यह आशंका रही हो।
या फ़िर अपने विशाल श्रावक समाज में किसी को भी उन्होंने बेबाक प्रश्न करते नहीं देखा हो। प्रेक्षाध्यान-निर्माण-प्रक्रिया पर भी यह साधक कई बार प्रश्न किया करता; महाप्रज्ञ को यह नहीं भाता। कार्यकर्ता-निर्माण योजना का प्रारुप अब भी कहीं फ़ाईलों में पड़ा होगा। धोती तो कब की फटकर भूली-बिसरी बात हुई। कल यह साधक भी देह वैसे ही छोड़कर बिसरा दिया जायेगा; किन्तु जब तक देह है, प्रयोजन नहीं बिसरेगा। तेरापन्थ अपनी प्रयोजनीयता के आईने में अपनी गतिविधियों की समीक्षा करे। कोई चाहे तो 'साधक के पत्र' और 'उद्भव,उत्कर्ष और अन्त; एक आध्यात्मिक क्रान्ति की आद्योपान्त समीक्षा' शोध-ग्रन्थ देखे!

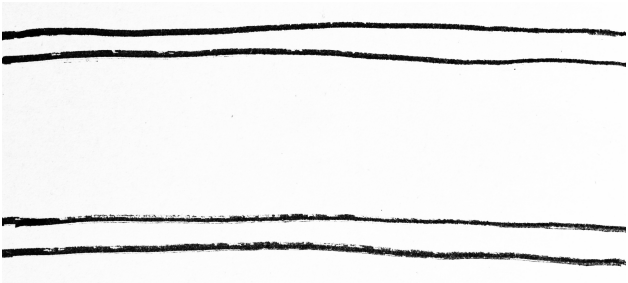

प्रशिक्षण का कार्य मेल खाता स्वभाव से।
ज्ञानाराधन चले निरन्तर शुद्ध भाव से॥
पूरे देश में सम्पर्कों का जाल बिछा है।
शीघ्र संगठन बन जाये, बस यही विधा है॥73

सीखा है संगठन, उसीको अपनाऊँगा।
तेरापन्थ को कुशल संगठक दे जाऊँगा॥
अनुशास्ता का अनुमोदन आवश्यक होता।
ध्यान ही स्वीकृतियों की हरदम राह बनाता॥74

जितने रंग भरे हैं सारे काम आयेंगे।
धूमिल रंग ध्यान से और निखर जायेंगे॥
बहुरंगी यह धरा विश्व में फिर चमकेगी।
संस्कृति के स्वर लेकर फिर से गमकेगी॥75।

मेरा क्या है मैं तो इस चादर में खुश हूं।
भावी सन्तति सुखी रहे इसमें ही खुश हूं॥
जितना जीवन बचा, यही कर पाऊँगा मैं।
अब कलकत्ता लौट के ना आ पाऊँगा मैं॥76

तन-मन टूटा कोलकाता में यहां संवरता।
चार महीने हुये नहीं, उत्साह उभरता॥
स्वावलम्बी हो पाऊँ, मन में आता है।
सेवायें स्वीकृत हों, मेरा मन करता है॥77।

आज रहा उपवास काम काफ़ी कर पाया।
एक तरह से स्वयं को ही मैं स्थिर कर पाया॥
अब कल ही नीड़म में जाकर रहना होगा।
शिविर चलेगा उसमें मुझको रहना होगा॥78।

शिविर व्यवस्था खेल है मेरे वाम हाथ का।
सौ-हजार साधक आयें, मौका है खुशी का॥
आसन-ध्यान-भोजन-आवास व्यवस्था सारी।
इन्तजार योजक का करती सब बेचारी॥79॥

ध्यान-अध्ययन तो नित ही करना है मुझको।
शिविर काल में भी कॉलिज जाना है मुझको॥
वस्त्र बदलने हेतु समय ना मिलेगा अब से।
यूं समझो चादर से काम चलेगा अब से॥80

चातुर्मास आचार्य-प्रवर का सरदारशहर है।
इससे पूर्व लाडनूं आने का भी क्रम है॥
उनके हाथ ही सारे निर्णय होने हैं अब।
मेरी किस्मत महाप्रज्ञ के हाथों में अब॥81।

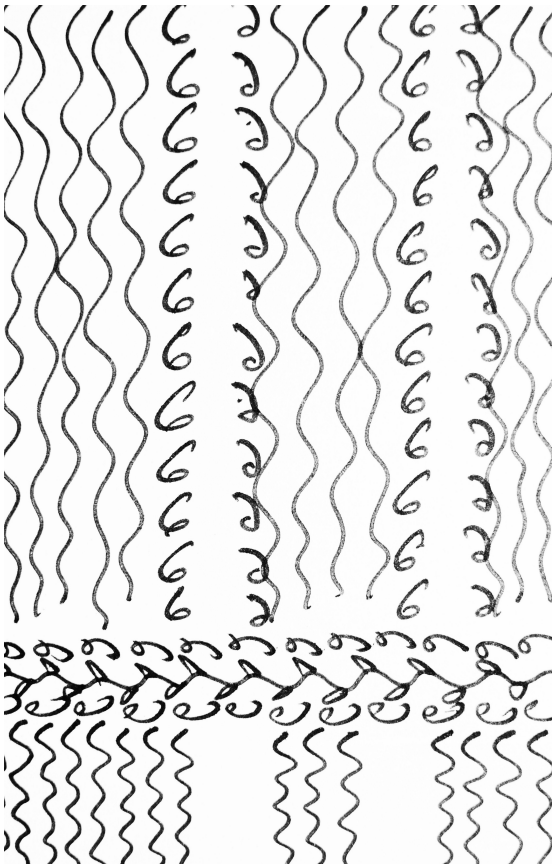

भिक्षु कहां हैं?

आचार्य महाप्रज्ञ पधारे। शिविर शुरु होकर सफ़लतापूर्वक शेष भी हो गया। साधक का श्रम दुगुना-तिगुना हुआ, किन्तु योगक्षेम की कोई व्यवस्था नहीं की गई। विभागाध्यक्ष श्री दयानन्द भार्गव ने भरपूर कोशिश की कि मुझे नोकरी दे दी जाये; श्रीचन्दजी बैंगाणी और रामपुरियाजी आदि के सामने बिठाकर मुझसे तत्वार्थ-सूत्र कहलवाया; जबकि वे पहले से ही मेरे पूज्य पिताजी के नाम से मेरे प्रति आकृष्ट थे। सबकी समस्या एक ही थी कि सारी श्रेष्ठ्ताओं के बावजूद गुरुदेव कोई 'ईंगित' नहीं करते! 1975 जयपुर में आयोजित प्रथम प्रेक्षा-प्रशिक्षण शिविर में इस साधक के उच्चारण पर श्री धर्मानन्दजी ने दोषपूर्ण बताकर असफ़ल घोषित किया, तो गुरुदेव तुलसी ने युवाचार्य महाप्रज्ञ की तरफ़ देखा। युवाचार्यश्री धर्मानन्दजी का अनुमोदन करना ही चाहते थे कि तुलसी ने स्पष्ट फ़रमाया, "इससे ज्यादा

\स्पष्ट उच्चारण और क्या होगा!" और यह साधक पहली पंक्ति में प्रेक्षा-प्रशिक्षक घोषित हुआ।

साधक का सौभाग्य है कि आचार्यश्री महाप्रज्ञ की कृपा के कारण तेरापन्थ समुदाय का अंग बने रहने की परम्परागत विवशता से मुक्त हुआ। इस कृतज्ञता का आलेख हैं दो ग्रन्थ – 'साधक के पत्र' और 'उद्भव, उत्कर्ष और अन्त-एक आध्यात्मिक क्रान्ति की आद्योपान्त समीक्षा'! तुलसी-महाप्रज्ञ के सपनों को साकार करने में अपनी देह सहित समस्त साधनों के सदुपयोग हित सजग है यह साधक। इसी सजगता के पदचिन्ह हैं आगामी प्रकाशन- विश्व विषाद योग, 'औसान' और अन्य रचनायें।

नवम्बर' 1997, लाडनूं

गुरुदेव महाप्रज्ञ पधारेंगे कुछ दिन में।
मेरी किस्मत संवर जायेगी अब कुछ दिन में॥
मेरे पक्ष में हर जन साक्षी दे सकता है।
साधु-साध्वी-समणी-श्रावक कह सकता है॥82

गृहस्थियों की मुश्किल महाव्रती सुलझाते।
उल्टे बांस बरेली को कब से भिजवाते!
असंगत इस समीकरण को फ़िर से बदले।
श्रावक हों तत्वज्ञ, तभी यह धारा बदले॥83।

निकट तत्व के आते ही दीक्षा हो जाये।
साधुवेष की गरिमा सबको ही भरमाये॥
श्रावक-कार्यकर्ता का तो दृष्टान्त नहीं है।
तुलसी युग का अन्त हुआ, प्रेरणा नहीं है॥84

गृहस्थों की उलझन साधु कैसे जाने?
जिया नहीं तो कैसे जीना पड़ता माने?
श्रावक का दायित्व, साधुपन शुद्ध रह सके।
छोटा कद रह गया, बड़प्पन कहां टिक सके?85।

श्रावक रहा सचेत भिक्षु निष्क्रमित हो गये।
शुद्धाचार की खातिर सारे कष्ट सह गये॥
आत्म-धर्म संसार-धर्म का भेद बताया।
आज दीखता है जो, पहले ही बतलाया॥86।

जैसी मुसीबतों में तेरापन्थ घिरा है।
महाव्रतियों पर पैसे का अम्बार लगा है॥
यश-पद-सुविधाओं की चाहत हावी सब पर।
कौन भिक्षु की राह चलेगा, प्रश्न हर तरफ़॥87।

संविधान पूर्वक चलकर हो पूर्ण तमन्ना।
गुरुदेव के आने तक तो कुछ ना होना॥
तब तक धैर्य मुझे पूरा ही रखना होगा।
चुप रहकर अध्ययन ध्यान ही करना होगा॥88।

इसी बीच में श्यामजी से चर्चा कर लूंगा।
उनकी कोई योजना होगी तो सुन लूंगा॥
कोलकाता आऊँगा चादर की चर्चा में।
चादर लगेगी सिर्फ़ संस्कृति की अर्चा में॥ 89।

इसी बीच मेरा लेखन भी खूब चलेगा।
महीना भर तो यह गीता लेखन ही चलेगा॥
फ़िर मुझको पद्यात्मक गीता भी लिखनी है।
जैन भारती में जाये, ऐसी लिखनी है॥90।

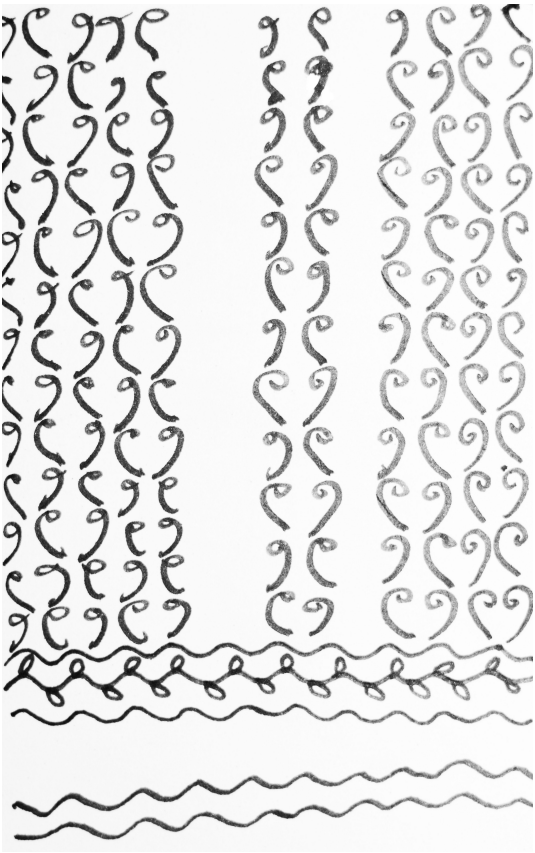

बदलो वस्त्र!

तेरापन्थ में देह स्वीकारना इस साधक का अपना निर्णय है, इसे जागृति-क्रम में सहयोगी जानकर स्वीकारा। इस देहयात्रा में जितना रास्ता इस साधन के सहयोग कटा, उतनी कृतज्ञता! संवेदना के स्तर पर सुख-दुख आये-भोगे। संवेदनाओं के स्तर पर देख पाता, उनके मर्म को जान-पहचान पाता तो भोगना नहीं पड़ता। भोगने के जो भी संकेत भाषा रुपमें उतरे, वे प्रमाण हैं कि इस साधक की यात्रा अभी बाकी है। इस दिशा में परस्पर सहयोग की कामना है।

3-11-1997 लाडनूं

हो सकता है स्मारिका भी लिख ही डालूं।
समय बहुत कम है पर काम ये कर ही डालूं।।
अब मुझको गोपन रखना है चित्त्वृति का।
चादर का उपयोग, सही आया है मौका।।91

चर्चा शेष करूँ, करना है काम बहुत सा।
सात बज रहे हैं रात्रि के हूं उपवासा।।
नींद और भी कम आयेगी, लेखन होगा।
एक बार में ही कैसेट एक पूरा होगा।।92

शरीर को भोजन ना दो तो बहुत लाभ हैं।
मन होता एकाग्र, ध्यानाध्ययन सुलाभ हैं।
भोजन-शुल्क में एक दिवस के पैसे बचते।
इस साधक के सिरका वजन जरा कम करते।।93

वैसे तो नीड़म की व्यवस्था अनुकूल है।
सतत साधकों से शुल्क लेते कुछ कम हैं।।
कम या ज्यादा उधार तो फ़िर कर्ज कहाये।
साधक पर हो अर्थ-कर्ज तो मन मुरझाये।94।

मन बैठे तो तन पर असर दिखाई देता।
अन्तःस्रावी ग्रन्थि-तन्त्र विष बरसा देता।।
पहले से ही रुग्ण हुआ तन कैसे झेले।
चादर और अधिक फ़टने का रस्ता ले ले।।95।

अच्छा है कि डिटरजेन्ट की नहीं व्यवस्था।
चादर झेल सके उसको, है नहीं अवस्था।।
बहुत प्यार पूर्वक जल से ही धो लेता हूं।
सर्दी शुरु हो रही है, तो ओढ लेता हूं।।96।

यह चादर मित्रों में शक पैदा करती है।
दीक्षार्थी समझें मुझको, ये भ्रम देती है।।
दिनचर्या-आचार मेरा वैरागी जैसा।
मित्र कहें यह साधक साधु-सन्तों जैसा।97।

धोती के जैसी मजबूरी है मेरी भी।
फ़टने जैसी जीर्ण-शीर्ण हालत मेरी भी।।
चादर जैसा भ्रमित कर रहा हूं मित्रों को।
अन्तरमन से देख रहा सारे चित्रों को।98।

फ़टे-पुराने वस्त्र बदलना उत्सव बनता।
यह साधक भी उत्सव हित तैयारी करता।।
धोती नई मिले इसमें तो शक हो सकता।
नई देह पाने से मैं कैसे बच सकता?99।

अब धोती की चर्चा को विराम ही समझो।
पूरी हुई तीन पत्रों में, खैर ये समझो।।
अगला पत्र नया ही विषय लिये आयेगा।
मगर ना जानूं कब तक तुमको मिल पायेगा।।100

इति